भगवान से सम्मुख मिलकर, बार-बार उसकी छवि निहार कर, सम्मुख ज्ञान सुनकर और उसकी नजर से निहाल होकर अपने तन-मन-धन से अपना-पन निकालकर उसे सच्चे दिल से से समर्पित करना ही त्याग करकें भी मैंने यह त्याग किया- यदि यह भावना मन में या मुख पर रहती है तो त्याग का फल समाप्त हो जाता है।

मान के लिए कार्य करना त्याग नहीं है

कई मनुष्य कोई भी कार्य इसलिए करते हैं कि उससे उन्हें मान मिलता है, चारों ओर उनका नाम फैल जाता है। जिससे उन्हें मान न मिलता हो उस कार्य को, हेय दृष्टि से निहारते हैं। मान की कामना से किये गये कार्य फलदायक नहीं होते, पुण्य जमा नहीं होता।

कई ज्ञानी भाषण इसलिए करते हैं कि उन्हें मान मिलता है या उनका चहुँ ओर नाम हो जाता है। इससे साधक को एक बड़ी हानि यह होती है कि वह इस कार्य में आसक्त हो जाता है। उसे यदि भाषण का अवसर न मिले तो उसे उदासी घेर लेती है। कर्म से यह आसक्ति साधना में गिरावट लाती है। ऐसी सेवाओं से खुशी तो अवश्य मिलती है, परन्तु यदि केवल खुशी की कामना से ही वह सेवा की जाती है तो वह खुशी शाश्वत नहीं रहती।

कोई व्यक्ति बड़ा सेवास्थान बनाने में यदि इसलिए धन का सहयोग करता है कि वह भी सबकी नज़रों में आ जाए, कोई व्यक्ति यदि बार-बार मंच पर इसलिए जाता है कि सब उसे महारथी समझें, तो वह महारथी तो समझा जाता है, परन्तु महान् नहीं बनता। उसका धन का सहयोग अनेक आत्माओं का तो कल्याण करता है परन्तु उसका कल्याण नहीं होता, क्योंकि सहयोग का फल उसे केवल सम्मान के रूप में ही प्राप्त हो जाता है। मान प्राप्ति को लक्ष्य बनाना- यह ज्ञानियों का लक्षण नहीं, क्योंकि मान मिलने से ही मनुष्य बड़ा नहीं बन जाता। यदि मान ही चाहता हो तो उसे स्वमान से व महान स्थिति से प्राप्त करना चाहिए । ऐसा मान स्थायी होता है और दूसरों के लिए प्रेरणा बन जाता है। माँग कर प्राप्त किया गया मान रॉयल्टी भी नहीं है और ऐसा मान देह अभिमान को बढ़ाकर बार-बार अपमान की अनुभूति कराता है।

मान तो हमें स्वयं भगवान ने दिया है। याद करो, हम इतने महान् बनते हैं, इष्ट देव बनतें हैं जो हमें मान देने के लिए लाखों भक्त बेसब्री से इन्तजार करते हैं। यह है स्थिति द्वारा अधिकार से प्राप्त मान। बाकी सब मान इसकी तुलना में टिमटिमाते दीपकों की तरह हैं जो कभी भी बुझ जाते हैं।

शान का जीवन योगियों का जीवन नहीं

सादगी को तिलांजली देकर शान से रहना, दिखावे से रहना, स्थिति के बजाय वस्त्रों पर व शारीरिक व्यक्तित्व पर ज्यादा ध्यान देना प्रभु-प्रेमी आत्माओं का लक्षण नहीं। विदित है कि इससे देह अभिमान बढ़ता है और रूहानियत में है। हमारी ओर सारा विश्व तब आकर्षित होगा, जब हममें पवित्रता व रूहानियत का आकर्षण होगा। बाह्य शान सदा नहीं चलती। किसी ने ठीक ही तो कहा है- सादगी श्रृंगार हो गई, आइने की हार हो

त्याग - अध्यात्म की शक्ति है

गई। क्या महान योगिनी दादी जानकी इसका प्रत्यक्ष उदाहरण नहीं है, जो असंख्य आत्माओं के आकर्षण का केन्द्र हैं।

हमारे पास अच्छे से अच्छा वाहन हो, मैं इससे बड़ा हूँ, मेरे पास इससे श्रेष्ठ साधन हो, मैं सेवा में बड़े पद पर हूँ, मेरे चश्मों का फ्रेम औरों से अच्छा व महंगा हो। मैं दूसरों के साथ भोजन कैसे करूँ यह शान की कामना मनुष्य को परेशान करने वाली है। जिनका ध्येय इस तरह का है, वे ऊँच विचारों की शान का अनुभव नहीं कर सकते। ऊँचे विचार तो उसकी ही शोभा बढ़ाते हैं जिनके जीवन में सादगी का रस हो। आजकल यह मान्यता है कि सीधे-सादे साधकों को पूछता ही कौन है? जिसका भभका ज्यादा, उसकी पूछ ज्यादा। परन्तु यह नहीं भूलना है कि अहंकार की पूँछ भी ज्यादा होती है जिसको फिर आग लगानी ही पड़ती हैं। यदि आप त्यागी हैं और कोई नहीं पूछता तो जरा इन्तजार करो, वह दिन दूर नहीं जब त्यागी ही विश्व की स्टेज पर होंगे।

सेवा के क्षेत्र में नम्बर तीन बातों के आधार पर मिलते हैं- 1. कितनों को सुख दिया 2. कितनों को योग्य व योगी बनाया। 3. स्वयं कितने शक्तिशाली बनकर रहे। सबसे सूक्ष्म व आवश्यक त्याग मैं-पन का है।

महत्व सेवा का नहीं, सेवा-भाव का है

जब सेवा, पद पोज़िशन से विकृत हो जाए तब सेवा संघर्ष बन जाती है। सेवा के क्षेत्र में आगे बढ़ना लोग इसे मान लेते हैं कि हम इन्चार्ज बन जाएं। हमारे पास शक्ति हो, धन पर हमारा अधिकार हो, हमारी आज्ञा सर्वमान्य हो। परन्तु सत्य यह है कि सेवा के क्षेत्र में वही मनुष्य अग्रणी है जिसके चित्त में सेवाभाव, रहमभाव व क्षमाभाव आ गया है। सेवा से यदि टकराव में वृद्धि हुई है, सेवा से परेशानियों में वृद्धि हुई है तो उसे सेवा नहीं कहा जाएगा। सेवा आत्माओं की पालना का नाम है, सेवा दातापन है, सेवा करके लेने का भाव अलौकिक भाव नहीं है। तो सेवा ने यदि हमारी टोपी ऊँची कर दी हो, तो हम उसे नीचा कर दें। सेवा का प्रत्यक्ष फल खुशी का खजाना है। खुशी भी बाह्यमुखता की नहीं, सांसारिक नहीं, आन्तरिक खुशी जिसकी चमक चेहरे से प्रतिभासित हो। त्याग के बल से की गई सेवा प्रत्यक्ष फल देती है। इससे ज्ञान सुनने वालों में आत्म-जागृति आती है। ज्ञान सुनने वाले, हमें और हमारे त्याग को देखते हैं, तब ही वे तपस्या के मार्ग पर चलने का साहस करते हैं।

मैं-पन कैसे आता है?

पहले मुझे यह मिले, फिर मैं सेवा करूँ, कोई चान्स नहीं दिया सहयोग नहीं, मैंने किया, यह सेवा मैं ही करूँगा, दूसरा हाथ नहीं लगा सकता मेरी ड्यूटी में तुमने हस्तक्षेप क्यों किया मेरे बिना पूछे तुमने अपनी मनमत से यह काम क्यों किया, मेरी मत ही श्रीमत है, मैं-पन की इन बातों को पहचानकर उनसे मुक्त होने के लिए जो उद्यत रहता है वही सेवा का सच्चा सुख लेने का अधिकारी है। सेवा यदि हमारी स्थिति को गिरा रही हो तो हमें त्याग की आवश्यकता है जो सेवा में अथवा कर्म में न्यारा व प्यारा होकर रहे, वही त्यागी है। मैं-मन का स्वरूप अति सूक्ष्म होता है। मैंने इतनी सेवा की, मुझे पूछा तक नहीं , मैं इतनी योग्य हूँ - मुझे कोई अवसर नहीं दिया जाता, मैं इनसे अच्छा भाषण कर सकती हूँ या मुरली सुना सकती हूँ, फिर भी इन्हें ही बार-बार अवसर मिलता है। इतना ही नहीं बल्कि कई तो वक्ता बनने पर, दूसरों को लिए अवसरों का त्याग कर दे, वही महान् है और अवसर परछाई की तरह उसके पीछे चलता है। दूसरों को इसलिए दबाकर रखना कि कहीं मेरी सीट न चली जाए, इस डर से अवसर न देना कि फिर मुझे कोई नहीं पूछेगा, इनका ही सब पर प्रभाव छा जाएगा, इस प्रकार दूसरों की महानताओं व योग्ताओं को सम्मान न देना भी मैं-पन है। इससे पुण्य का सम्पूर्ण खाता क्षीण हो जाता है। समय आने पर मैं-पन युक्त आत्माएँ विघ्नों के अधीन हो जाती हैं और इस संसार में खुद को अकेला अनुभव करती हैं।

सच्चा त्यागी कौन

जो वस्तु मिलने पर न मिलने पर मान-अपमान, हार-जीत, निन्दा-स्तुति में समान रहे- वह महात्यागी है क्योंकि उसने निष्काम भाव से कर्म करना सीख लिया है और उसने अभी इच्छाओं का त्याग कर निमित्त भाव धारण कर लिया है। जो न्यारा होकर भौतिक पदार्थो का उपयोग करे। पदार्थ व साधन न होने पर परेशान न हो। कार में यात्रा करने को मिले, चाहे साइकिल पर, दोनों में समभाव से रहे। चाहे 36 प्रकार के भोजन मिले, चाहे अचार-रोटी, दोनों में आनन्दित रहें, वही महात्यागी है। चाहे हज़ारों के मध्य भाषण करने को मिले, चाहे झाड़ू लगाने की सेवा मिलें, दोनों में समान भाव से सुखी हो, वही सच्चा त्यागी है। जो अच्छे कर्म करते हुए भी आसक्त न हो, वही त्यागी है। जो सब कर्मों में स्वार्थ भाव त्याग कर सेवा भाव से रत है, सच्चा त्यागी है।

तो अभी वसुन्धरा पर त्याग और वैराग्य की लहर फैलाएँ ताकि अनेक साधक ईश्वरीय मिलन से स्वयं को तृप्त कर सकें। त्याग करके भी जो त्याग का आन्तरिक सुख नहीं लें पा रहे हैं, उन्हें सही मार्ग-दर्शन मिले। त्याग करके अनेक महानात्माएं अपने जीवन को दिव्य बना सकें और इससे भी अधिक, हमारा सेवा का क्षेत्र विघ्नों से मुक्त, आत्मा को उड़ाने वाला बन जाए। हमारे पास हमारे लिए कुछ न हो, सब कुछ विश्व की सेवा के लिए हो। कितनी भाग्यवान हैं वे रूहें जिनका तन, मन व धन दूसरों को सुख देने में काम आ जाए। तो हम साधनों की दौड़ से बाहर जाएं तो अनुभूतियों की खान प्राप्त हो जाए।

सैफयी (करहल)। सैफयी आयुर्वेदिक अनुसंधान संस्थान के डायरेक्टर डॉ.टी.प्रभाकरन, गीता बहन, ब्र.कु.प्रेम मसंद, ब्र.कु.गीता व ब्र.कु.सरिता।

गोकाक। घटप्रभा मल्लिकार्जुन स्वामी, ब्र.कु.सुनिता, ब्र.कु.मिराजी आध्यात्मिक कार्यक्रम का उद्घाटन करते हुए।

मुम्बई (डोंबिवली)। बाल विकास शिविर के अवसर पर चित्रकार प्रमोदजी, श्यामसुंदर जोगलेकर, ब्र.कु.शकु, श्रीमती राधिका गुप्ता, विनोद पुनमिया।

छतरपुर। बीएससी नर्सिंग ग्रुप को स्वप्रबंधन कोर्स कराने के पश्चात ब्र.कु.रीना, ब्र.कु.सुलेखा, ब्र.कु.रजनी समूह चित्र में।

कानपुर (किदवई नगर)। महापौर जगतवीर सिंह को ओम शान्ति मीडिया पत्रिका भेंट करते हुए ब्र.कु.आरती व ब्र.कु.दीपा।

सोनीपत। पूर्व मंत्री वेद सिंह मलिक को परमात्म संदेश देने के पश्चात ईश्वरीय सौगात भेंट करते हुए ब्र.कु.प्रमोद व ब्र.कु.सुनिता।